शोध-पत्र

सुनीता खुराना*

नागार्जुन के काव्य में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ

आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में नागार्जुन महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वे प्रगतिवादी काव्यधारा के शीर्षस्थ कवि माने जाते हैं। नागार्जुन का संपूर्ण रचनाकर्म यथार्थ की भावभूमि पर प्रतिष्ठित है। वे समाजवादी यथार्थ-दृष्टि अपनाते हुए अपने समय के यथार्थ को अभिव्यक्त करते हैं। उनकी यथार्थवादी दृष्टि विचारधारात्मक आधार का ग्रहण करती है। यह विचारधारात्मक आधार मार्क्सवाद है। मार्क्सवाद के अनुसार कला और साहित्य मूलत: सामाजिक-राजनीतिक कर्म है। नागार्जुन ने भी इसी के अनुरूप अपनी कविताओं में अपने समय के सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त किया है। नागार्जुन के काव्य में निहित सामाजिकता को लक्षित करते हुए विजय बहादुर सिंह ने लिखा है-"नागार्जुन की भावुकता और उल्लास के ये तरंगित प्रसंग हैं जहाँ वे समाज की प्रत्येक पीड़ा को माँ की तरह गोद ले लेते हैं और व्यापक सहानुभूति का वातावरण रचते हैं।"[1]

नागार्जुन बहुत ही स्पष्ट रूप में सामाजिकता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की घोषणा करते हैं। वे जनकवि हैं और जनता के प्रति पूरी तरह समर्पित हैं। इस संदर्भ में उनकी निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं।

"प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ, प्रतिबद्ध हूँ-
बहुजन समाज की अनुपल प्रगति
के निमित्त
संकुचित 'स्व' कर आपाधापी
के निषेधार्थ....
अविवेकी भीड़ को 'भेड़ियाधसान'
के खिलाफ....
अन्य-बधिर 'व्यक्तियों' को सही
राह बतलाने के लिए
अपने आप को भी 'व्यामोह' से
बारम्बार उबारने के खातिर....
प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ,
शतधा प्रतिबद्ध हूँ" [2]

अपनी इसी प्रतिबद्धता के कारण नागार्जुन की दृष्टि सामाजिक यथार्थ के विविध पक्षों की ओर गई है और उन्होंने अपने काव्य में जनता के दुख:दर्द, समस्याओं, संघर्ष और उसकी जीवन-स्थितियों को उजागर किया है। भारतीय समाज का एक बड़ा यथार्थ यह है कि वह गरीबी की विकराल समस्या से ग्रस्त है। दरिद्रता और अभाव भारतीय जनजीवन का एक बड़ा सच है। इस सच को अभिव्यक्त करते हुए नागार्जुन लिखते हैं-

"मैं दरिद्र हूँ
पुश्त-पुश्त की यह दरिद्रता
कटहल के छिलके-जैसी जीभ से
मेरा लहु चाटती आई।
मैं न अकेला
मुझे जैसे तो लाख-लाख है,
कोटि-कोटि हैं
यों तो सबका यही हाल है
सभी सरों पर यह बवाल है।"[3]

स्वतंत्रता के बाद भारत की आम जनता में अपने विकास के प्रति बहुत उम्मीदें थीं। स्वतंत्रता-प्राप्ति और लोकतंत्र की स्थापना के बाद आम आदमी की आँखों में अपने विकास को लेकर तमाम तरह के सपने पल रहे थे। लेकिन स्वतंत्रता के बाद धीरे-धीरे जनता के सपने धूमिल पड़ने लगे और उनमें नाउम्मीदी उत्पन्न होने लगी। नागार्जुन की कविता यह प्रश्न उठाती है कि आम जनता के सपने एवं उम्मीदें कब पूरी होंगी और कब उनकी जीवन-स्थितियाँ बेहतर होंगी-

"उसका मुक्तिपर्व कब होगा?
कब होती उसकी दीवाली?
चमकेगी उसके ललाट पर
कब ताजे कुंकुम की लाला?"[4]

आम जनता की समस्याओं के प्रति नागार्जुन के काव्य में जो सरोकार दिखाई देते हैं वह मात्र बौद्धिकता का परिणाम नहीं है बल्कि वे आम जन से गहरी संवेदना के स्तर पर जुड़े हुए हैं। इसलिए उनके काव्य का अवगाहन करते हुए हम पाते हैं कि उसमें निर्धन, असहाय जन के

* असिस्टेंट प्रोफेसर, 3683, सेक्टर-231, गुड़गांव, हरियाणा, ईमेल : sunitadelhi3010@gmail.com

प्रति एक गहन रागभाव मौजूद है-

"भूखों मरते हों बच्चे तो
यों ही मत रह जाओ
आँते सूख रही हों तो
आँसू मत वृथा बहाओ
हाथ पैर वाले हो,
नाहक कायर नहीं कहाओ
कीड़ों और मकोड़ों जैसे
यों मत प्राण गँवाओ
भूखे मरते हों बच्चे तो
यों ही मत रह जाओ।"[5]

बेरोजगारी और भूख स्वातंत्र्योत्तर भारत का भयावह सामाजिक यथार्थ रहा है। देश की एक बड़ी जनसंख्या इसका शिकार रही है। नागार्जुन इस यथार्थ को परिलक्षित करते हैं और अपनी कविताओं में इसकी मार्मिक अभिव्यक्ति करती हैं। इस संदर्भ में उनकी निम्नांकित पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं-

"खाली नहीं ट्राम, खाली नहीं ट्रेन,
खाली नहीं माइण्ड, खाली नहीं ब्रेन
खाली है हाथ, खाली है पेट
खाली है थाली, खाली है प्लेट।"[6]

नागार्जुन के काव्य में जो सामाजिक चेतना दिखाई देती है। उसका विचारधारात्मक आधार मार्क्सवाद है। इसलिए नागार्जुन के काव्य में वर्गीय चेतना बहुत ही स्पष्ट रूप में दिखाई देती है। वे समाज में सबको समान अधिकार दिए जाने की आकांक्षा रखने वाले और इसके लिए संघर्ष करने वाले कवि हैं। वे वर्ग-संघर्ष की चेतना से युक्त हैं। वे उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग का शोषण किए जाने के यथार्थ से परिचित हैं और उनकी कविता शोषित वर्ग के पक्ष में खड़ी होती है। अपनी इस वर्ग-चेतना के कारण ही नागार्जुन का सौंदर्यबोध पारंपरकि सौंदर्य बोध नहीं है। उनके सौंदर्यबोध में अभिजात्य-दृष्टि का अभाव है। इस पर प्रकाश डालते हुए आलोचक शंभूनाथ ने लिखा है-

"चौरंगी की हवाखोरी के लिए निकले भद्रवर्ग से भिन्न दृष्टिकोण हमारे इस कवि का है, क्योंकि उसका सौंदर्यबोध सही अर्थों में मानवीय है। उसके वस्तुनिष्ठ सौंदर्यबोध में आत्मपरक तत्त्वों का योग कम था, आभिजात्य बिल्कुल न था, बल्कि इस तरह की प्रवृत्ति पर व्यंग्यात्मक चोट करने का अवसर कवि ने कभी खोया नहीं।"[7]

अपनी वर्गीय-दृष्टि के कारण नागार्जुन शोषक वर्ग की पहचान कर पाते हैं। वे देख पाते हैं कि पूंजीवादी व्यवस्था में किस तरह शोषक वर्ग अपने आर्थिक लाभ के लिए निम्न वर्ग का शोषण करता है। नागार्जुन अपनी एक कविता में इस स्थिति को निम्नांकित पंक्तियों में अभिव्यक्त करते हैं-

"वे हुलसित हैं
अपनी ही फसलों में डूब गये हैं
तुम हुलसित हो
चितकबरी चाँदनियों में खोये हो
उनको दुख है
तरुण आम की मंजरियों का
पाला मार गया है
तुमको दुख है
काव्य-संकलन दीपक चाट गए हैं।"[8]

वस्तुतः नागार्जुन के काव्य में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ के केंद्र में सर्वहारा वर्ग है। इस सर्वहारा वर्ग की आधार-भूमि बहुत विस्तृत है। मुख्यतः मजदूर, छोटे किसान और दलित इस सर्वहारा वर्ग में सम्मिलित हैं। नागार्जुन की इस वर्गीय चेतना पर प्रकाश डालते हुए डॉ. चन्द्रहास सिंह ने लिखा है-

"नागार्जुन की वर्ग-चेतना उनकी सामाजिक चेतना का ही अनिवार्य अंग है इसलिए वर्गों का स्थूल विभाजन-भर उनकी कविता में नहीं है और न ही नागार्जुन इसे स्वीकार करते हैं। वे सैद्धांतिक स्थापनाओं को अपने दृश्यमान जीवन-जगत से पुष्ट करते हैं। इसलिए वर्गों के भी उपवर्ग और अंतर्वर्ग उनकी कविता में पहचाने जा सकते हैं। वर्गों की गतिशील, सामाजिक गतिशीलता की सहज पहचान होती है और यह यथार्थ की गतिशीलता भी होती है। अतः नागार्जुन की वर्गीय चेतना समाज के गतिशील यथार्थ की भी चेतना है। इस चेतना को जीवन की वास्तविकताओं से ही पहचाना जा सकता है और इसके लिए खुली आँख की जरूरत हैं। नागार्जुन के यहाँ वर्ग-चेतना और वर्ग-संघर्ष भी है, जिसे भारतीय जमीन पर ही समझा जा सकता है। कई बार वर्ग चेतना के सूत्र इस वर्ग चेतना से मिल जाते हैं और इतना प्रबल हो जाते हैं कि संघर्ष की प्रक्रिया में वर्ग-संघर्ष को ही जीवंत करते हैं।"[9]

नागार्जुन के काव्य का यह स्वरूप उनकी प्रगतिवादी चेतना के वास्तविक रूप को दर्शाता है। अपनी इसी चेतना के कारण वे पूंजीपति वर्ग पर बार-बार व्यंग्यात्मक चोट भी करते हैं। अपनी एक कविता 'प्रेत का बयान' में वे देश में अध्यापक वर्ग की आर्थिक दुर्दशा को अनावृत करते हुए लिखते हैं-

"सुनकर दहाड़
स्वाधीन भारतीय प्राइमरी स्कूल के
भुखमरे स्वाभिमानी सुशिक्षित प्रेत की
रह गए निरुत्तर
महामहिम नरकेश्वर!!"[10]

सामाजिक विसंगतियों पर चोट करनेवाली नागार्जुन की इस व्यंग्यधर्मिता की पहचान हिंदी के कई आलोचकों ने की है। आलोचक नामवर सिंह ने इसको रेखांकित करते हुए लिखा है-

"नागार्जुन की कविता में पाठक के साथ रिश्ते की चिंता पाई जाती है, लेकिन वे कविता के प्रति नव-धनाढ्य वर्ग में उपजे फूहड़ शौक पर व्यंग्य करते हैं, जिनके पास न तो रचना की समझ है, न

वैसी परिस्थितियाँ। वहाँ तो मात्र प्रदर्शन के लिए कला और साहित्य की बात की जाती है। नागार्जुन को इस भद्र वर्ग के धन-वैभव से अधिक गुस्सा उसके संस्कृति प्रेम के ढ़ोंग पर है।"[11]

नागार्जुन की कविताओं को देखने पर यह पता चलता है कि वे शोषक वर्ग से एक रचनात्मक लड़ाई लड़ते हैं। वस्तुत: नागार्जुन यह लड़ाई व्यवहारिक स्तर पर भी लड़ते हैं और साहित्य-सर्जना के धरातल पर भी। वे जहाँ एक ओर अपने जीवन में विभिन्न किसान एवं मजदूर आन्दोलनों में भाग लेकर पूंजीवादी शक्तियों का विरोध करते हैं तो दूसरी ओर अपनी रचनाओं में शोषण की पहचान करते हैं और शोषक वर्ग पर तीव्र प्रहार करते हैं। इस पर प्रकाश डालते हुए हरिचरण शर्मा ने लिखा है-

"नागार्जुन की कविताएँ भारत के जनजीवन की मुँह बोलती वे तस्वीरें हैं जिनमें नगरीय और ग्रामीण समाज की विषमताओं, विवशताओं और विकृतियों के गहरे रंग भरे हैं। लोक चेतना के कवि नागार्जुन ने संतप्त, उपेक्षित और मर्दित जन समुदाय का चित्रण करके ही नहीं छोड़ दिया है, उसके प्रति अपनी गहरी सहानुभूति भी अर्पित की है।"[12]

वस्तुत: नागार्जुन एक ऐसे कवि हैं जिनमें मजदूर एवं किसान वर्ग के प्रति गहरी एकात्मता दिखाई देती है। उनका हृदय एक साधारण जन के हृदय के साथ अन्तर्लयित होता दिखाई देता है। उनके इस वैशिष्ट्य को रेखांकित करते हुए आलोचक अजय तिवारी ने लिखा है-

"नागार्जुन और मुक्तिबोध की उपस्थिति में भिन्नता यह है कि मुक्तिबोध मध्यवर्ग के, मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी के प्रतिनिधि के रूप में आते हैं, नागार्जुन साधारण किसान या श्रमिक की तरह हँसते, चुटकी लेते, क्रोध करते, बेचैन और व्यग्र होते हुए दिखाई देते हैं। कारण यह कि मुक्तिबोध के काव्य में मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी और श्रमिक वर्ग के बीच दूरी बनी रहती है, नागार्जुन के काव्य में यह दूरी मिट जाती है, कवि के मनोभावों और दृष्टिकोण को श्रमिक जनता के सुख-दुख, स्नेह सौंदर्य, चिंता-रोष और आशा-आकांक्षा से अलग देखना आसान नहीं रहता।"[13]

नागार्जुन के काव्य में निहित सामाजिक यथार्थ-चेतना का एक महत्त्वपूर्ण वैशिष्ट्य यह है कि वे शोषित वर्ग की संघर्ष-चेतना एवं क्रांति-शक्ति में विश्वास रखते हैं। इसलिए उनकी कविताओं में उपस्थित साधारण जन संघर्षशील दिखाई देता है और विषम से विषम परिस्थितियों से जुझता हुआ फिर जीवन की ओर अग्रसर होता है-

"दाने आए घर के अंदर
कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन से ऊपर
कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखें
कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखे
कई दिनों के बाद"[14]

अपनी कविता 'हरिजन-गाथा' में नागार्जुन शोषित एवं दलित वर्ग की क्रांति-चेतना में अपना विश्वास प्रकट करते हैं। इस कविता के दूसरे भाग में वे अपने इस विश्वास की अभिव्यक्ति के लिए कृष्ण अवतार के मिथक और ज्योतिषी की भविष्यवाणी जैसी शिल्पगत युक्तियों का प्रयोग करते हैं। वे एक नवजात शिशु का प्रतीक-रूप में इस्तेमाल कर नई क्रांति-चेतना को संकेतित करते हैं-

"श्याम सलोना यह अछूत शिशु,
हम सबका उद्धार करेगा।
दिल ने कहा-अरे यह बच्चा
सचमुच अवतारी वराह है
इसकी भावी लीलाओं का
सारी धरती चारागाह है
दिला ने कहा दलित माँओं के
सब बच्चे अब बागी होंगे,
अग्नि पुत्र होंगे वे अंतिम
विप्लव में सहभागी होंगे।"[15]

नागार्जुन के काव्य में जो क्रांति-चेतना दिखाई देती है, उसका स्रोत नागार्जुन जन को ही मानते हैं। उनके अनुसार सामान्य जन के भीतर मौजूद क्रांति-चेतना से प्रेरित होकर ही वे भी इस पथ पर चल पड़े हैं-

"नई-नई सृष्टि रचने को तत्पर
कोटि-कोटि कर चरण
देते रहें अहरह स्निगध इंगित
और मैं अलस-अकर्मा
पड़ा रहूँ चुपचाप!
यह कैसे होगा?
यह क्यों कर होगा?"[16]

इस प्रकार नागार्जुन के काव्य में सामाजिक यथार्थ की ठोस अभिव्यक्ति हुई है। वे अपने काव्य में पूंजीवादी व्यवस्था के चरित्र, शोषक वर्ग द्वारा शोषित वर्ग के शोषण के रूपों, वर्ग-संघर्ष, आम जन की समस्याओं और उसकी गरीबी आदि को उजागर करते हैं। उनकी कविता में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ को लक्षित करते हुए आलोचक शंभुनाथ ने बिल्कुल ठीक लिखा है कि "जनता की भूख और विक्षोभ को वाणी देते हुए सर्वहारा के साथ रहने-जीने, उनके दुख-दर्द का साथी बनने की अद्‌भुत ललक मन में रखने वाले जिस कवि को हम अपनी संवेदना के बहुत निकट पाते हैं तथा जिसे इतिहास भी चिरकाल तक जानेगा, वह नागार्जुन ही है।"[17]

संदर्भ सूची

1. डॉ. चन्द्रहास सिंह, नागार्जुन का काव्य, पृ. 12
2. नागार्जुन की कविता (सं. प्रभाकर माचवे और सुरेश सलिल) पृ. 167
3. नागार्जुनः चुनी हुई रचनाएँ-2 (सं. शोभाकांत मिश्र, पृ. 85
4. वही, पृ. 233
5. नागार्जुन, पुरानी जूतियों का कोरस, पृ. 57
6. नागार्जुन, चुनी हुई रचनाएँ-2 (सं. शोभाकांत मिश्र), पृ. 61
7. डॉ. चन्द्रहास सिंह, नागार्जुन का काव्य, पृ. 37
8. नागार्जुन, चुनी हुई रचनाएँ-2 (सं. -शोभकांत मिश्र), पृ. 66
9. डॉ. चन्द्रहास सिंह, नागार्जुन का काव्य, पृ. 108
10. वही, पृ. 79
11. डॉ. चन्द्रहास सिंह, नागार्जुन का काव्य, पृ. 39
12. नये प्रतिनिधि कवि हरि, हरिचरण शर्मा, पृ. 21-22
13. अजय तिवारी, नागार्जुन की कविता, पृ. 64-65
14. नागार्जुन, सतरंगे पंखों वाली, पृ. 32
15. नागार्जुन, चुनी हुई रचनाएँ, पृ. 246
16. नागार्जुन, सतरंगे पंखों वाली, पृ. 14
17. डॉ. चन्द्रहास सिंह, नागार्जुन का काव्य, पृ. 109